रघु लक्ष्मीनारायणन

बनाम

मैसर्स फाइन ट्यूब्स

5 अप्रैल, 2007

[एस. बी. सिन्हा और मार्कंडेय काटजू, जे. जे.]

परक्राम्य लिखत अधिनियम, 1881-धारा 141 व 138:

प्रोपराइटरशिप फर्म द्वारा जारी चेक का अनादरण - उसके कर्मचारी के खिलाफ परिवाद - अभिनिर्धारित स्वामित्व संबंधी मामला धारा 141 के अंतर्गत एक कंपनी नहीं है - इसलिए ऐसी कंपनी के कर्मचारी के खिलाफ कार्रवाई नहीं की जा सकती है - दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 - धारा 482.

कंपनी द्वारा कार्य - निदेशक का प्रत्यावर्ती दायित्व।

सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908-आदेश XXX, नियम 1 और 10 साझेदारी फर्म और प्रोपराइटरशिप फर्म - पुनरावृत्त के बीच का अंतर।

प्रत्यर्थी संख्या 1 ने परक्राम्य लिखत अधिनियम की धारा 138 के तहत अपराध करने का आरोप लगाते हुए शिकायत याचिका दायर की। यह आरोप लगाया गया था कि अभियुक्त संख्या 2 से 6 द्वारा 2 लाख रुपये की राशि का चैक जारी किया गया था, जिसे प्रस्तुत करने पर अनादरित कर दिया गया। अभियुक्त सं. 1 को भी समान क्षमता में वर्णित किया

गया था। अपीलार्थी अभियुक्त नं. 3 को अभियुक्त सं. 1 का प्रभारी, प्रबंधक, निदेशक के रूप में वर्णित किया गया था। मेट्रोपॉलिटन मजिस्ट्रेट ने अभियुक्तगण को समन जारी किया। अपीलार्थी ने उन्हें जारी किए गए समन को रद्द करने के लिए उच्च न्यायालय के समक्ष अंतर्गत धारा 482 सीआरपीसी में आवेदन दायर किया। आवेदन को खारिज किया गया इसलिए यह अपील पेश की।

न्यायालय ने अपील की अनुमति दी।

अभिनिर्धारितः 1. निदेशकों, साझेदारों या अन्य व्यक्तियों को कंपनी के व्यवसाय का प्रभारी और नियंत्रण करने या अन्यथा उसके मामलों के लिए जिम्मेदार बनाने के लिए परक्राम्य लिखत अधिनियम जैसे दंडात्मक कानूनों में प्रत्यावर्ती दायित्व की अवधारणा पेश की गई थी ; कंपनी स्वयं एक न्यायिक व्यक्ति है। [पैरा 8] [889-डी]

2. परिवाद याचिका के मात्र अवलोकन से स्पष्ट है कि अभियुक्त नंबर 1 को उसमें 'एक व्यावसायिक संस्था' के रूप में वर्णित किया गया था। इसे कंपनी या साझेदारी फर्म या व्यक्तियों के संगठन के रूप में वर्णित नहीं किया गया था। परिवाद याचिका में अभियुक्त का विवरण बिल्कुल अस्पष्ट है। एक न्यायिक व्यक्ति कंपनी अधिनियम, 1956 के प्रावधानों के अनुसार एक कंपनी या भारतीय साझेदारी अधिनियम, 1932 के प्रावधानों के अनुसार एक साझेदारी या व्यक्तियों का एक संघ हो सकता

है जिसका अर्थ आमतौर पर व्यक्तियों का एक निकाय होगा जो किसी भी क़ानून के तहत निगमित नहीं है। हालाँकि, एक स्वामित्व वाली संस्था पूरी तरह से एक अलग आधार पर खड़ी है।

एक व्यक्ति किसी व्यावसायिक संस्था के नाम पर व्यवसाय कर सकता है, लेकिन वह उसका स्वामी होने के नाते, उसके कार्यों के संचालन के लिए पूरी तरह से जिम्मेदार होगा। एक स्वामित्व वाली संस्था एक कंपनी नहीं है। परक्राम्य लिखत अधिनियम की धारा 141 के स्पष्टीकरण के अनुसार कंपनी का अर्थ है कि कोई भी निगमित निकाय और इसमें एक फर्म या व्यक्तियों का अन्य संघ शामिल है।

निदेशक का अर्थ एक फर्म के संबंध में, फर्म में एक भागीदार के रूप में परिभाषित किया गया है। इस प्रकार, जबकि एक कंपनी के संबंध में व उसके तहत निगमित और पंजीकृत कंपनी अधिनियम, 1956 या कोई अन्य कानून, एक निदेशक के रूप में एक व्यक्ति को उक्त विवरण के दायरे में आना चाहिए, जहां तक एक फर्म का संबंध है, वही अर्थ होगा जो भारतीय साझेदारी अधिनियम में निहित है। "निदेशक" के उक्त विवरण को ध्यान में रखते हुए, एक व्यक्ति के अलावा जो उसके दायरे में आता है, किसी और पर इस तरह की क्षमता में उसके प्रत्यावर्ती दायित्व के माध्यम से मुकदमा नहीं चलाया जा सकता है। यदि अपराध किसी कंपनी द्वारा नहीं किया गया है, तो एक निदेशक होने या उसके परोक्ष रूप से होने का

सवाल इसलिए, उत्तरदायी नहीं होगा। [पैरा संख्या 7,9 और 10] [889-सी; ई-जी; 890-ए]

3. अपीलार्थी ने स्पष्ट रूप से तर्क दिया कि आरोपी नंबर 1 आरोपी नंबर 2 की मालिकाना कंपनी थी आर वह केवल उसका एक कर्मचारी था। यदि आरोपी नंबर 1 परक्राम्य लिखत अधिनियम की धारा 141 के अर्थ के तहत एक कंपनी नहीं थी, तो किसी कर्मचारी के खिलाफ उसके संदर्भ में कार्रवाई करने का सवाल ही पैदा नहीं होता। प्रत्यर्थी एक 'साझेदारी फर्म' और एक 'व्यावसायिक संस्था' के बीच के अंतर से अवगत था, जैसा कि इस तथ्य से स्पष्ट होगा कि उसने खुद को एक साझेदारी फर्म और आरोपी नंबर 1 को एक व्यावसायिक संस्था के रूप में वर्णित किया था। गौरतलब है कि प्रत्यर्थी ने जानबूझकर या अन्यथा यह नहीं बताया कि अपीलार्थी किस क्षमता में उक्त व्यावसायिक संस्था की सेवा कर रहा था। इसने उन्हें प्रभारी, प्रबंधक और अभियुक्त नं. 1 के निदेशक के रूप में वर्णित किया है। एक व्यक्ति आम तौर पर एक कंपनी के प्रबंधक और निदेशक दोनों के रूप में सेवा नहीं कर सकता है। [पैरा संख्या 11 और 12] [890-बी-डी]

4. साझेदारी फर्म और एक स्वामित्व संस्था के बीच का अंतर सर्वविदित है। यह सिविल प्रक्रिया संहिता के आदेश XXX नियम 1 और आदेश XXX नियम 10 से स्पष्ट है। यह सामान्य बात है कि एक स्वामित्व वाली संस्था भारतीय कंपनी अधिनियम के तहत निगमित कंपनी

या भारतीय कंपनी अधिनियम की धारा 4 के प्रावधानों के अनुसार एक फर्म के विवरण का जवाब नहीं देगी। भारतीय साझेदारी अधिनियम। [पैरा संख्या 13 और 14] [890-ई; 891-डी]

एस. एम. एस. फार्मास्युटिकल्स लिमिटेड बनाम नीता भल्ला, ए. आई. आर. (2005) एस. सी. 3512 का अनुसरण किया।

साहिता राममूर्ति और अन्य बनाम आर. बी. एस. चन्नबसवराध्य, ए. आई. आर.(2006) एससी 3086 और एस. एम. एस. फार्मास्युटिकल्स लिमिटेड बनाम नीता भल्ला, (2007) 3 स्केल 245 पर भरोसा किया गया।

मैसर्स अशोक परिवहन एजेंसी बनाम अवधेश कुमार और अन्य, [1998] एस. सी. सी. 567, संदर्भित।

5. उपरोक्त कारणों से, यह न्यायालय, उच्च न्यायालय से सहमत नहीं है कि दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 482 के तहत उसके अधिकार क्षेत्र के प्रयोग के लिए कोई मामला नहीं बनता हो। अपीलार्थी के खिलाफ परिवाद प्रकरण रद्द कर दिया जाता है। [पैरा संख्या 16 और 17] [891-एफ]

दिल्ली उच्च न्यायालय, दिल्ली द्वारा आपराधिक एम. सी. संख्या 3626/ 2005 के निर्णय और आदेश दिनांकित 07.08.2006.

एस. बी. सिन्हा, जे.

1. अनुमति स्वीकृत की गई।

2. हमारे सामने अपीलार्थी को मुख्य महानगर मजिस्ट्रेट, दिल्ली के समक्ष प्रंथम प्रत्यर्थी द्वारा दायर परिवाद याचिका में अभियुक्त संख्या 3 के रूप में रखा गया था। जो परिवाद प्रकरण संख्या 379/1/2003 के रूप में दर्ज किया गया था। उक्त परिवाद याचिका उसमें नामित अभियुक्तगण पर परक्राम्य लिखत अधिनियम की धारा 138 के तहत अपराध करने के लिए यह आरोप लगाते हुए कि अभियुक्त नं. 2 से 6 द्वारा एक चेक दिनांकित 15.8.2002 जारी किया गया था जिसे केनरा बैंक में प्रस्तुत करने पर अनादरित कर दिया गया और नोटिस के बावजूद आरोपी ने उक्त राशि का भुगतान नहीं किया, मुकदमा चलाने के लिए दायर की गइ थी।

3. आरोपी व्यक्तियों की सूची में अभियुक्त संख्या 1 की स्थिति का खुलासा नहीं किया गया था।

4. निदेशक/अध्यक्ष/अध्यक्ष प्रबंध निदेशक, मालिक, प्रभारी के माध्यम से इसका प्रतिनिधित्व करने की मांग की गई थी। यहां अपीलकर्ता को भी समान क्षमता में आरोपी नंबर 1 का प्रभारी, प्रबन्धक, निदेशक वर्णित किया गया था। इसी प्रकार अन्य प्रत्यर्थीगण थे।

5. हालाँकि, परिवाद याचिका में यह आरोप लगाया गया था;

"1. परिवादी दिल्ली फर्म के पंजीयक के साथ विधिवत पंजीकृत एक साझेदारी है और मोहित गुप्ता इसके साझेदारों में से एक है। परिवादी के लिए और उसकी ओर से यह परिवाद दर्ज करने के लिए विधिवत अधिकृत और सशक्त है।

2. यह कि प्रत्यर्थी संख्या 1 एक व्यवसायिक संस्था है आर प्रतिवादी संख्या 2 आर 6 अन्य अधिकारियों आदि के साथ, इसके प्रभारियों, प्रबंधकों, निदेशकों आर साझेदारों के साथ इसका खुलासा किया गया है क्याेंकि वे पूरे समय के लिए साथ काम कर रहे हैं। परिवादी स्वयं लेन-देन के लिए खुद को इतना जिम्मेदार होने का प्रतिनिधित्व करना और प्रत्यर्थी संख्या 1 का दिन-प्रतिदिन काम करना।"

6. विद्वान मुख्य महानगर मजिस्ट्रेट ने प्रत्यर्थी द्वारा दर्ज परिवाद याचिका व उसमें किये गये कथनों या उनके आधार पर अन्य अभियुक्त व्यक्तियों के समन जारी किये। दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 482 के तहत उच्च न्यायालय के समक्ष दायर एक आवेदन में उन्हें जारी किए गए समनों को रद्द करने के लिए अपीलार्थी द्वारा दायर आवेदन को यह कहते हुए खारिज कर दिया गया था;

"..... समन से पहले साक्ष्य दर्ज किए जाने के बाद विद्वान एम. एम. ने पाया कि सभी अभियुक्तों के खिलाफ प्रथम दृष्टया मामला बनता है आर इसलिए इन अभियुक्तों को तलब किया गया। इस समन आदेश को चुनौती देते हुए आरोपी नंबर 3 ने धारा 482 सी.आर.पी.सी. के तहत यह याचिका दायर की है। अन्य बातों के साथ यह तर्क दिया कि वह उक्त अभियुक्त सं. 1 का कभी निर्देशक नहीं था आर विवादित चेक उसके द्वारा हस्ताक्षरित नहीं है और यह कि वह अभियुक्त सं. 1 के व्यवसाय के संचालन के लिए जिम्मेदार नहीं था। याचिकाकर्ता का मामला है कि वह अभियुक्त नं. 1 का कर्मचारी था, जिसके समर्थन नियुक्ति पत्र दिनांक 15.7.2000 संलग्न है, जिसके अनुसार याचिकाकर्ता को "निदेशक-उत्पादन" के रूप में नियुक्त किया गया था। इस क्षमता में वह संपूर्ण मशीन चयन के साथ-साथ श्रम, प्रक्रिया और सामग्री प्रबंधन सहित उत्पादन के लिए जिम्मेदार था। इसके बाद पत्र दिनांकित 21.10.2001 के माध्यम से, जो याचिकाकर्ता द्वारा भी प्रस्तुत किया गया है, उन्हें विपणन विभाग का नेतृत्व करने के लिए कहा गया और उन्हें "निदेशक-विपणन" पदनाम दिया गया। प्रथम दृष्टया, निदेशक - विपणन के रूप में याचिकाकर्ता

अभियुक्त संख्या 1 के विपणन विभाग का प्रभारी था और शिकायतकर्ता के साथ काम कर रहा था और आरोपी नंबर 1 के दिन-प्रतिदिन के मामलों को संभाल रहा था। इसलिए, याचिकाकर्ता जो तर्क देता है वह तथ्य के विवादित प्रश्न हैं और यह उसका बचाव करता है जिसका विचारण न्यायालय के समक्ष नेतृत्व किया जाना है। धारा 482 Cr.P.C के तहत इस याचिका में ऐसे प्रश्नों पर विचार नहीं किया जा सकता है।"

7. परिवाद याचिका के एकमात्र अवलोकन से पता चलता है कि आरोपी संख्या 1 को उसमें 'एक व्यावसायिक संस्था' के रूप में वर्णित किया गया था। इसे कंपनी या साझेदारी फर्म या व्यक्तियों के संगठन के रूप में वर्णित नहीं किया गया था।

8. निदेशक, साझेदार या अन्य व्यक्तियों के लिए परक्राम्य लिखत अधिनियम जैसे दंडात्मक कानूनों में प्रत्यावर्ती दायित्व की अवधारणा की गई थी। व्यक्ति, जो कंपनी के व्यवसाय के प्रभारी और नियंत्रण में हैं या अन्यथा इसके मामलों के लिए जिम्मेदार हैं; कंपनी स्वयं एक न्यायिक व्यक्ति है।

9. परिवाद याचिका में अभियुक्त का विवरण बिल्कुल अस्पष्ट है। एक न्यायिक व्यक्ति कंपनी अधिनियम, 1956 के प्रावधानों के तहत एक

कंपनी हो सकता है या भारतीय साझेदारी अधिनियम, 1932 के प्रावधानों के तहत साझेदारी हो सकता है या व्यक्तियों का एक संघ, जिसका आमतौर पर अर्थ व्यक्तियों का एक समूह होगा, जिसको किसी भी क़ानून के तहत शामिल नहीं किया गया। हालाँकि, एक मालिकाना कंपनी बिल्कुल अलग स्तर पर खड़ी है। कोई व्यक्ति व्यावसायिक प्रतिष्ठान के नाम पर व्यवसाय कर सकता है, लेकिन उसका मालिक होने के नाते, वह इसके मामलों के संचालन के लिए पूरी तरह से जिम्मेदार होगा। एक मालिकाना संस्था कोई कंपनी नहीं है। धारा 141 परक्राम्य लिखत अधिनियम के स्पष्टीकरण में कंपनी का अर्थ है कि उसमें कोई भी निकाय-कॉर्पोरेट और इसमें एक फर्म या व्यक्तियों का अन्य संघ शामिल है। निदेशक को किसी फर्म के संबंध में, फर्म में भागीदार के रूप में परिभाषित किया गया है। इस प्रकार, जबकि कंपनी अधिनियम, 1956 या किसी अन्य क़ानून के तहत निगमित और पंजीकृत कंपनी के संबंध में, निदेशक के रूप में एक व्यक्ति को उक्त विवरण के दायरे में आना चाहिए, जहां तक एक फर्म का संबंध है, वही लागू होगा वही अर्थ जो भारतीय भागीदारी अधिनियम में निहित है।

10. यह ध्यान रखना दिलचस्प है कि "निदेशक" शब्द को परिभाषित किया गया है। यह ध्यान रखना महत्वपूर्ण है कि "निदेशक" के उक्त विवरण के मद्देनजर, उसके दायरे में आने वाले व्यक्ति के अलावा,

किसी अन्य पर ऐसी क्षमता में उसके पारस्परिक दायित्व के माध्यम से मुकदमा नहीं चलाया जा सकता है। यदि अपराध किसी कंपनी द्वारा नहीं किया गया है, तो निदेशक होने या उसके परोक्ष रूप से उत्तरदायी होने का सवाल ही नहीं उठता।

11. अपीलार्थी ने यहां स्पष्ट रूप से तर्क दिया कि आरोपी नंबर 1 आरोपी नंबर 2 की मालिकाना कंपनी थी और वह केवल उसका एक कर्मचारी था।

12. यदि आरोपी नंबर 1 परक्राम्य लिखत अधिनियम की धारा 141 के अर्थ के तहत एक कंपनी नहीं थी, तो किसी कर्मचारी को उसके संदर्भ में पूर्ववर्ती होने का सवाल ही नहीं उठता। प्रत्यर्थी को 'साझेदारी फर्म' और 'व्यावसायिक संस्था' के बीच अंतर के बारे में पता था, जैसा कि इस तथ्य से स्पष्ट होगा कि उसने खुद को एक साझेदारी फर्म और आरोपी नंबर 1 को एक व्यापारिक संस्था के रूप में वर्णित किया था। गौरतलब है कि प्रतिवादी ने जानबूझकर या अन्यथा यह नहीं बताया कि अपीलकर्ता किस क्षमता से उक्त व्यावसायिक संस्था को सेवा दे रहा था। जैसा कि यहां पहले देखा गया है, उसे आरोपी नंबर 1 के प्रभारी, प्रबंधक और निदेशक के रूप में वर्णित किया गया है। एक व्यक्ति आम तौर पर एक कंपनी के प्रबंधक और निदेशक दोनों के रूप में सेवा नहीं कर सकता है।

13. साझेदारी फर्म और एक स्वामित्व संस्था के बीच का अंतर अच्छी तरह से ज्ञात है। यह सिविल प्रक्रिया संहिता के आदेश XXX नियम 1 और आदेश XXX नियम 10 से स्पष्ट है। मैसर्स अशोक परिवहन एजेंसी बनाम। अवधेश कुमार और अन्य, [1998] 5 एस. सी. सी. 567] यह प्रश्न इस न्यायालय के समक्ष भी विचार के लिए आया था, जिसमें इस न्यायालय ने निम्न प्रकार से कानून का उल्लेख किया हैः

> "शर्तेंः 6- एक साझेदारी फर्म एक व्यक्ति के स्वामित्व वाली मालिकाना कंपनी से भिन्न होती है। एक साझेदारी भारतीय साझेदारी अधिनियम 1932 के प्रावधानों द्वारा शासित होती है, हालांकि साझेदारी एक न्यायिक व्यक्ति नहीं है लेकिन आदेश XXX, नियम 1, सीपीसी साझेदारी फर्म के भागीदारों को फर्म के नाम पर मुकदमा करने या मुकदमा करने में सक्षम बनाता है। एक मालिकाना संस्था केवल व्यवसाय का नाम है जिसमें व्यवसाय का मालिक व्यवसाय चलाता है। किसी मालिकाना प्रतिष्ठान द्वारा या उसके विरुद्ध कोई मुकदमा व्यवसाय के मालिक द्वारा या उसके विरुद्ध होता है। किसी मालिकाना प्रतिष्ठान के मालिक की मृत्यु की स्थिति में, मालिक के कानूनी प्रतिनिधि ही मालिकाना

व्यवसाय के लेनदेन के संबंध में मुकदमा कर सकते हैं या मुकदमा दायर कर सकते हैं।

आदेश XXX के नियम 10 के प्रावधान, जो ऑर्डर XXX के प्रावधानों को एक मालिकाना कंपनी पर लागू करते हैं, एक मालिकाना व्यवसाय के मालिक को उसकी मालिकाना कंपनी के व्यावसायिक नाम पर मुकदमा चलाने में सक्षम बनाता है। जिस वास्तविक पक्ष पर मुकदमा दायर किया जा रहा है वह उक्त व्यवसाय का मालिक है। उक्त प्रावधान का मालिकाना व्यवसाय को साझेदारी फर्म में परिवर्तित करने का प्रभाव नहीं है। आदेश XXX के नियम 4 के प्रावधान ऐसे मुकदमे पर लागू नहीं होते हैं क्योंकि आदेश XXX के आधार पर, नियम 10 के आधार पर आदेश XXX के अन्य प्रावधान मालिकाना व्यवसाय के मालिक के खिलाफ एक मुकदमे पर लागू होते हैं "जहां तक ऐसे मामले की प्रकृति है परमिट" - इसका मतलब यह है कि आदेश XXX के केवल उन्हीं प्रावधानों को मालिकाना कंपनी पर लागू किया जा सकता है जिन्हें मामले की प्रकृति को ध्यान में रखते हुए लागू किया जा सकता है।"

14. हम परिवाद याचिका में लगाए गए आरोपों को ध्यान में रखते हुए, कंपनी अधिनियम, 1956 की धारा 34 और भारतीय साझेदारी अधिनियम, 1932 की धारा 4 के अनुसार 'कंपनी' या 'साझेदारी' की परिभाषा के संबंध में विस्तार की आवश्यकता नहीं है। लेकिन, हम केवल यह नोट कर सकते हैं कि यह सामान्य बात है कि एक स्वामित्व वाली संस्था भारतीय कंपनी अधिनियम के तहत निगमित कंपनी या भारतीय साझेदारी अधिनियम की धारा 4 के प्रावधानों के अर्थ के भीतर एक फर्म दोनों के विवरण का उत्तर नहीं देगी।

15. इस न्यायालय की एक संविधान पीठ ने एस. एम. एस. फार्मास्युटिकल्स लिमिटेड बनाम नीता भल्ला, ए. आई. आर. (2005) एस. सी. 3512] में आगे स्पष्ट रूप से कहा कि परिवाद याचिका में अधिनियम की धारा 141 के दायरे में एक मामले को लाने के लिए आवश्यक कथन होने चाहिए ताकि इसके लिए अप्रत्यक्ष रूप से उत्तरदायी कंपनी के अलावा कुछ व्यक्तियों को बनाया जा सके। [सबिता राममूर्ति और अन्य बनाम आर. बी. एस. चन्नबसवराध्य, ए. आई. आर. (2006) एस. सी. 3086 और एस. एम. एस. फार्मास्यूटिकल्स लिमिटेड बनाम नीता भल्ला, (2007) 3 स्केल 245 भी देखे।]

16. उपरोक्त कारणों से, हम उच्च न्यायालय के इस निष्कर्ष से सहमत नहीं हैं कि दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 482 के तहत उसके अधिकार क्षेत्र के प्रयोग के लिए कोई मामला बनना नहीं पाया जाता है।

17. विवादित फैसले को अपास्त किया जाता है। अपील स्वीकार की जाती है। अपीलार्थी के खिलाफ परिवाद प्रकरण रद्द किया जाता है।

अपील स्वीकार की गई।

यह अनुवाद आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस टूल '**सुवास**' की सहायता से अनुवादक न्यायिक अधिकारी बलवंत सिंह भारी (आर.जे.एस.) द्वारा किया गया है।

अस्वीकरण: यह निर्णय पक्षकार को उसकी भाषा में समझाने के सीमित उपयोग के लिए स्थानीय भाषा में अनुवादित किया गया है और किसी अन्य उद्देश्य के लिए इसका उपयोग नहीं किया जा सकता है। सभी व्यावहारिक और आधिकारिक उद्देश्यों के लिए, निर्णय का अंग्रेजी संस्करण ही प्रामाणिक होगा और निष्पादन और कार्यान्वयन के उद्देश्य से भी अंग्रेजी संस्करण ही मान्य होगा।